भवानीप्रसाद मिश्र की काव्य योजना

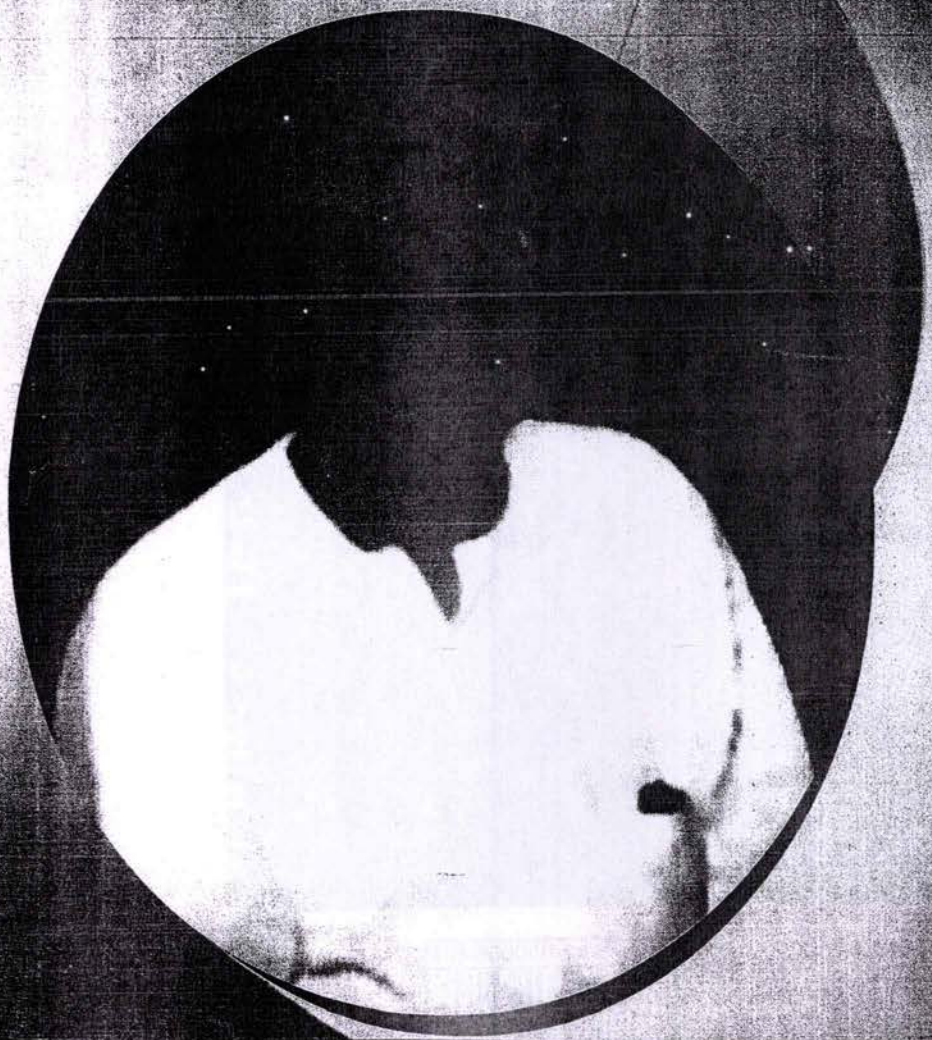

श्यामसुन्दर पाण्डेय

Certified as
TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

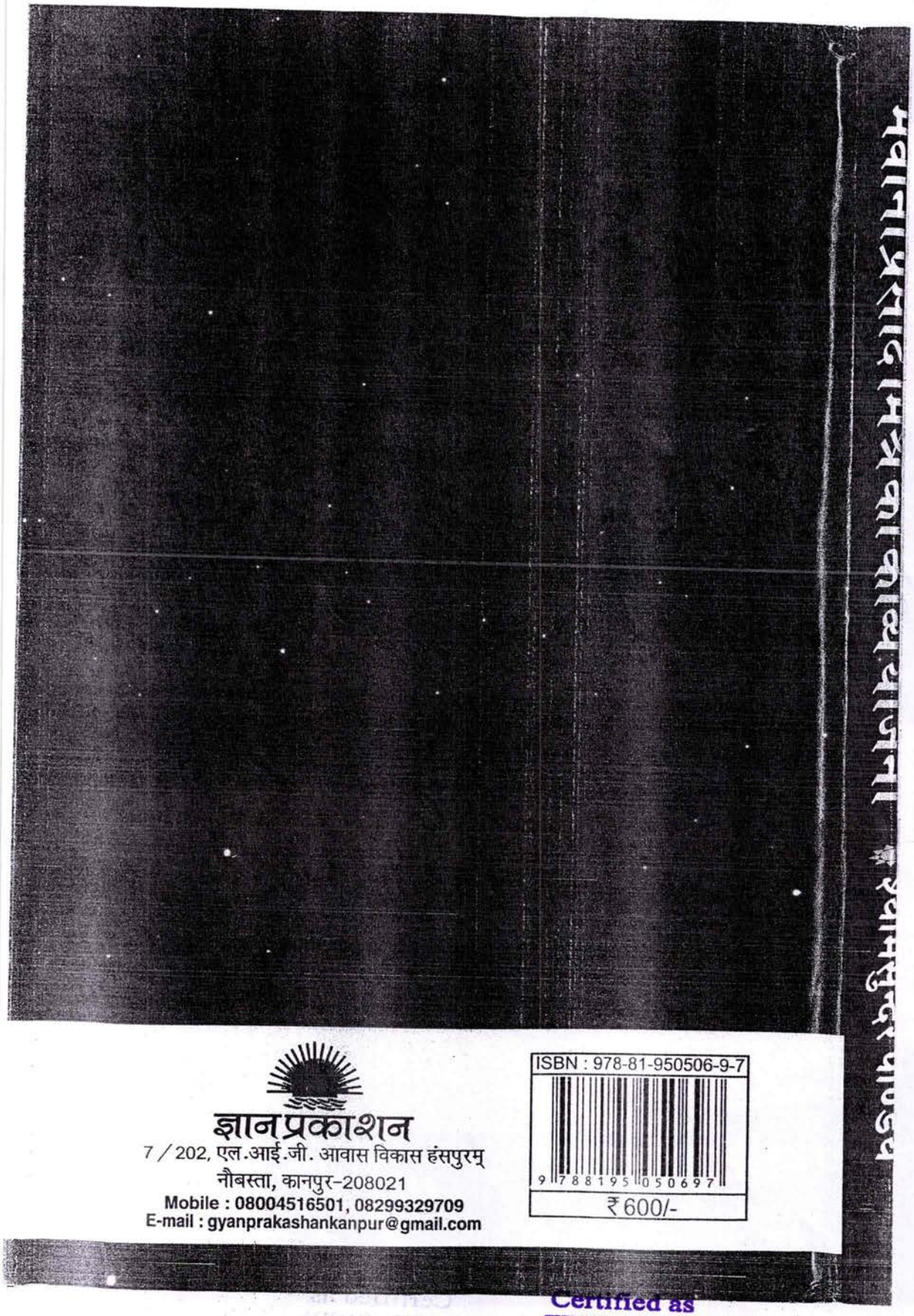

भवानीप्रसाद मिश्र का काव्य योजना ❋ श्यामसुन्दर पाण्डेय

ज्ञान प्रकाशन
7 / 202, एल.आई.जी. आवास विकास हंसपुरम्
नौबस्ता, कानपुर-208021
Mobile : 08004516501, 08299329709
E-mail : gyanprakashankanpur@gmail.com

ISBN : 978-81-950506-9-7

9 788195 050697

₹600/-

Certified as
TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

I.S.B.N. : 978-81-950506-9-7

हिन्दी

जि

पुस्तक : भवानी प्रसाद मिश्र की काव्य योजना

संपादक : श्यामसुन्दर पाण्डेय

प्रकाशक : ज्ञान प्रकाशन
7/202, एल.आई.जी. आवास विकास,
हंसपुरम, नौबस्ता, कानपुर-208 021 (उ.प्र.)
08004516501, 08299329709 (Mob.)

Email : gyanprakashankanpur@gmail.com

संस्करण : सन् 2022

मूल्य : ₹ 600/- मात्र

शब्द-सज्जा : च्वाइस कंप्यूटर ग्राफिक्स, कानपुर

मुद्रक : पूजा ऑफसेट, कानपुर-12

Bhawani Prasad Mishra Ki Kavya Yojna

Edited by Shyamsundar Pandey

Price : Rupees Six Hundred Only

Certified as
TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

अनुक्रम

1. भवानी प्रसाद मिश्र : जीवनवृत्त 13
   – *जयश्री सिंह*
2. व्यक्तित्व की विरल बनावटें : भवानी प्रसाद मिश्र 21
   – *विजय बहादुर सिंह*
3. स्नेह भरी उंगली 29
   – *अनुपम मिश्र*
4. कवि-कर्म में तप और ताप का नया पाठ 36
   – *कृष्णदत्त पालीवाल*
5. कवि भवानीप्रसाद मिश्र का महत्त्व 51
   – *विजय बहादुर सिंह*
6. नई राह के अन्वेषक : भवानी प्रसाद मिश्र 59
   – *श्यामसुंदर पाण्डेय*
7. भवानी प्रसाद मिश्र और गाँधीवाद 66
   – *हूबनाथ पाण्डेय*
8. 'त्रिकाल संध्या' में आपातकालीन आक्रोश की अभिव्यक्ति 71
   – *सुनीता पाखरे*
9. इस दु:खी संसार में जितना बने हम सुख लुटा दें – भवानी प्रसाद मिश्र 76
   – *ऋचा शर्मा*
10. 'दूसरा सप्तक' के कवि भवानी प्रसाद मिश्र 80
    – *उषा मिश्रा*
11. भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य का स्वरुप 86
    – *मनप्रीत कौर*
12. 'गीत-फ़रोश' काव्य में प्रकृति-चित्रण 91
    – *नलिनी मिश्रा*
13. भवानी प्रसाद मिश्र की प्रेम-कविताएँ
    – *प्रवीण चन्द्र बिष्ट*
14. भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य में प्रकृति चित्रण 104
    – *संतोष मोटवानी*

Certified as
TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

15. भवानी प्रसाद मिश्र : मानवीय संवेदना के कवि 107
- *ऋषिकेश मिश्र*

16. भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य में हास्य व्यंग्य 117
- *सुरभि मिश्रा*

17. कालजयी की काव्य संवेदना 123
- *पूनम संतोष पटवा*

18. भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य में प्रकृति 129
-*उर्मिला सिंह*

19. संस्मरणों के बहाने भवानी प्रसाद मिश्र 133
- *भावना मासीवाल*

20. लोक साहित्य और भवानी प्रसाद मिश्र 141
- *मिथिलेश शर्मा*

21. भवानी प्रसाद मिश्र की कविताएँ और बाज़ार विमर्श का संदर्भ 149
-*उर्वशी*

22. भवानी प्रसाद मिश्र : गाँधीवादी या मार्क्सवादी 155
- *संजय*

23. हिंदी की बाल कविता और भवानी प्रसाद मिश्र 161
-*प्रकाश चंद*

24. मौजूदा समय में भवानी प्रसाद मिश्र की कविता 168
- *धनंजय कुमार साव*

25. भवानी प्रसाद मिश्र की कविता : संवेदना के विविध रुप 176
- *शैलेन्द्र कुमार शुक्ला*

26. गाँधी पंचशती और भवानीप्रसाद मिश्र 183
- *प्रशांत देशपाण्डे*

27. भवानी भाई की कविताओं में प्रकृति, मनुष्यता व जीवन संघर्ष 188
- *दिनेश पाठक*

28. गाँधीवाद के बहाने मानव-अस्मिता की खोज 196
- *सुनील कुमार द्विवेदी*

Certified as TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

20
लोक साहित्य और भवानी प्रसाद मिश्र

– मिथिलेश शर्मा

यद्यपि साहित्य का केंद्र लोक कल्याण की भावना ही है। अत: यह भावना कवि और जनमानस दोनों की होकर एक हो जाती है। लोक साहित्य लोगों का साहित्य है। इस साहित्य में यथार्थता की प्रधानता होती है। लोक साहित्य इतिवृत्तात्मकता और निर्जीव कल्पना की परिधि से बाहर है। लोक साहित्य सामाजिक यथार्थ के जलते कैनवास पर चलते हुए लोगों का साहित्य है। यथार्थ को कल्पना के रंग में रंगकर प्रस्तुत करना न केवल हृदयहीन चतुरता है बल्कि असंस्कार भी है। जो जैसा है उसे वैसा ही बताना–यथार्थ है और यही लोक साहित्य भी। लोक साहित्य स्वयं दर्पण है। एक ऐसा चश्मा, जो एड़ी की फटी बेवाई, खुशहाल नकाब में रोती औरत पसीने से लथपथ देह और उसकी बदबू सब कुछ देखता है।

लोक साहित्य में गाँव है, अभाव है, इसलिए यह समाज बनावटी नहीं है। जो जैसा है, बस है। लोक साहित्य धर्म, समाज, और राजनीति का संगम है। शहरों की उठापटक से कोसों दूर है। इसमें लोगों का भोलापन ही मानवता का निमित्त बनता है।

भवानी प्रसाद मिश्र के साहित्य में लोकतत्व का आधार उनका अपना व्यक्तित्व भी है। मिश्र जी ने जो जैसा है, उसे वैसा न कहने वालों की पोल खोली है इसलिए कह सकते हैं कि गाँव के लोगों को फूहड़ और असभ्य मानने वाले बनावटी लोगों ने अपनी स्वाभाविकता खो दी है। फर्श वालों ने मिट्टी में काम करने वालों से मानसिक दूरी बना ली जिससे गाँव और शहर के बीच अंतराल आ गया। यह अंतराल एक के ससंधाधन और दूसरे के संसाधन हीन होने के कारण आया।

आजकल एक विदेशी संस्कृति अपने देश को पूरा निगलना चाहती है, वह है – अजनवीपन। भारत के शहर इससे अधिक प्रभावित हैं। गाँवों का झगड़ा बस दोपहर भर का ही होता है। अगर ऐसा न होता तो एक गाँव का छप्पर उठाने दूसरे गाँव वाले कभी न आते।

गाँधी जी के चरखे ने कुटीर उद्योग के माध्यम से लोक को बड़े पैमाने पर जोड़ा था। मिश्र जी श्रम का महत्व मशीन और मशीन मालिक से अधिक समझते हैं। एक श्रमिक जो दिन की दो रोटी को खटकर पसीने में बदलना जानता हो, उसे असभ्य कैसे

Certified as
TRUE COPY
Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

कहा जा सकता है!

गाँव की धूल, मिट्टी को उबटन बनाने के उपमान की मानसिकता वाले पिछड़े नहीं हैं। गाय, भैंस चराते-चराते आल्हा और कजरी गाने वाले गँवार नहीं हैं क्योंकि उसमें वे सब खुद को पाते हैं। वे अपने स्वभाव में हैं। जमीन पर चलना पिछड़ापन है? वे धान रोपते हैं, क्या इसलिए पिछड़े हैं और शहरों में धन्नासेठों की कोठरियाँ धान से भरी पड़ी हैं, क्या इसलिए वे सभ्य हैं?

'मैं असभ्य हूँ क्योंकि खुले नंगे पाँवों चलता हूँ
मैं असभ्य हूँ क्योंकि धूल की गोदी में पलता हूँ
मैं असभ्य हूँ क्योंकि चीरकर धरती धान उगाता हूँ
मैं असभ्य हूँ क्योंकि ढोल पर बहुत जोर से गाता हूँ
आप सभ्य हैं क्योंकि हवा में उड़ जाते हैं ऊपर
आप सभ्य हैं क्योंकि धान से भरी है आपकी कोठी
आप सभ्य हैं क्योंकि जोर से पढ़ जातेहैं पोथी।'[1]

गाँव और शहर के अंतराल को स्पष्ट करते हुए मिश्र जी कहते हैं कि शहर के लोग चमकदार कपड़े पहनने को ही सभ्यता मानते हैं, भले ही उनकी आत्मा दूषित हो, कलुषित हो। मिश्रजी ने व्यक्तित्व का संबंध आत्मा से जोड़कर इस विषय को उदात्त बना दिया है। मिश्र जी स्वयं अपनी परंपरा और संस्कृति में गहरी आस्था रखते हैं इसलिए गाँव के लोगों व उनके कामों को भी महत्व देते हैं। श्रम का महत्व समझने वाले मिश्र जी को प्रतिक्रियावादी कहने वालों की कमी नहीं है फिर भी व्यक्ति का अपने स्वभाव में लौटना यदि प्रतिक्रियावाद है, तो कहा करें, जिसे जो कहना हो।

कविता शीर्षक 'धोती कुरता बहुत जोर से' में संस्कृति और सभ्यता के अंतर को स्पष्ट किया गया है। ऊँचे पदों पर कुर्सी पकड़कर बैठना क्या सभ्यता है? या फिर अपने काम से काम रखने की चित्तवृत्ति उन्हें अधिक सदाचारी बनाती है। श्रम में सौंदर्य का दर्शन सव्यसाची अभ्यास है, समवाद है, अखण्डवाद है, एक है और एकता भी। अत: मेहनत की गाढ़ी कमाई में ही सार्थकता है और यथार्थता भी। गाँव और उसके परिवेश को समझना स्वाभाविक होना है - शहर वालों की तरह नेक टाई पहनना भर नहीं! गाँव के लोग फुरसत में बैठने को 'खाली दिमाग शैतान का घर' मानते हैं। शहर के लोग घड़ी की सुईयों की रफ़्तार में खुद को बाँधकर देखते हैं इसलिए समय खत्म होते ही उनका काम भी खत्म हो जाता है। गाँव के लोग काम निकालते हैं और सुबह से शाम कब हो जाती है, घड़ी की सुईयाँ कितनी बढ़ जाती हैं, बिना सोचे खेतों में अपनी जान खपा देते हैं।

श्रम को अपना अस्तित्व मानकर महत्व देते हुए और उसे समझकर विलासिता

Certified as
TRUE COPY
Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

से दुराव रखते हुए मिश्र जी कहते हैं –

'बूढ़े और बच्चे,
या जवान
औरत और मर्द
मिलकर कर रहे हैं
काम खेत में
और मैदान में
और पहाड़ पर
सोच रहा हूँ पड़ा-पड़ा मैं
विस्तर पर
और महसूस कर रहा हूँ
अपने को दरिद्र।'[2]

'कविता मुझको लिखती है' की स्वाभाविकता वाले मिश्र जी के 'सन्नाटा' कविता शीर्षक की प्रत्येक पंक्ति ऊपापोह और हिचक में आगे बढ़ती है। अपनी जीवन तलाशने की फिक्र उन्हें सन्नाटे तक ले जाती है। यह अलग बात है कि सायरन के परिवेश में सन्नाटे तक सरकना आसान नहीं है लेकिन अस्तित्व की तलाश में वे दर-दर जाते हैं। इस अस्तित्व की तलाश उन लोगों को भी है जिन्हें गँवार समझकर हाशिये पर छोड़ दिया गया है। मिश्रजी ने स्पष्ट किया है कि गाँव में संसाधनों की कमी में उन्हें अँधेरे में रहने वाला कब घोषित किया गया, उन्हें इसकी ख़बर भी नहीं, फिर भी वे अपनी चाल में चल रहे हैं।

मिश्र जी कहते हैं कि मैं ऐसे सूने में रहता हूँ जहाँ केवल घनी घासें हैं, पत्थर के कुछ छोटे टुकड़े, गोबर की बदबू और पीपल की छाँव है। यहाँ अंधकार ही रहता है, भले सूरज चढ़ आया हो। ऐसे परिवेश में भी लड़कर जीतने की हिम्मत रखने वाले मिश्र जी को कुछ लोग शांति वाला समझते हैं लेकिन वे बोल रहे हैं। सायरन से सन्नाटे तक की यात्रा करके उन्होंने श्रम के आधार पर इस बोली को सहेजा है, सँवारा है और अपनाया भी है।

'मैं सन्नाटा हूँ फिर भी बोल रहा हूँ,
मैं शांत बहुत हूँ फिर भी डोल रहा हूँ,
मैं सूने में रहता हूँ ऐसा सुना
जहाँ घास उगा रहता है ऊना
और झाड़ कुछ इमली के, पीपल के,
अंधकार जिनसे होता है दूना।'[3]

Certified as
TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

मिश्रजी ने बताया कि जिन लोगों को दरकिनार किया गया है, समाज में इनके होने न होने से कोई फर्क नहीं पड़ता, उन्हें किसी बात का डर नहीं है। वैसे भी, डर तो हर जगह है। यहाँ समझने की बात यह है कि उन्हें जिस हाशिये पर धकेला गया है, वहाँ डर की कोई वजह है ही नहीं! हाँ! एक बात का दु:ख जरुर है कि इनके पहले जिन लोगों को धकिया कर दरकिनार किया गया था, अब वे ही यहाँ नहीं है। समाज के शोषकों ने उन्हें उनके अस्तित्व के साथ समूचा निगल लिया है।

आज गाँव का एक अदना आदमी इन्हीं सामाजिक विसंगतियों से खिसककर दरअसल उस ककहरे में आ गया है जहाँ उसे अस्तित्व की खोज सायरन से सन्नाटे तक करनी होती है। यह सन्नाटा हुआ नहीं है, किया गया है। अत: इसके खिलाफ जाकर उन अधिकारों तक पहुँचा जा सकता है जहाँ चहल-पहल है, खुशियाँ हैं। यह सन्नाटा इनके बोलने के अधिकार को छीनने से हुआ है। दर्द है, लेकिन आह! नहीं। बची-खुची, पेट-पीठ एक करके कमाई खुशियाँ हैं लेकिन वाह! नहीं।

'तुम डरो नहीं, डर वैसे कहाँ नहीं है।
पर खास बात डर की कुछ यहाँ नहीं है।
बस एक बात है, वह केवल ऐसी है।
कुछ लोग यहाँ थे, अब वे यहाँ नहीं हैं।'[14]

मिश्र जी ने लोक साहित्य में उस माँ की खोज की है जो हर मुसीबत के रहते हुए भी अपने बेटों का साथ नहीं छोड़ती। इतना ही नहीं, उन बेटों को भी अपनी माँ की उंगलियों पर विश्वास है। उनकी उंगलियों की संगत उन्हें सही दिशा में ले जायेंगी। प्रारंभ से अंत तक साथ रहने के वायदे ने बेटे को निश्चिंत कर दिया है। शहरों में माँ, बाप, बच्चे तीनों अलग-अलग राह पर नजर आते हैं। जो समय बच्चों के लिए होना चाहिए, उस पर बैंकों की पासबुकों ने अधिकार कर लिया है। फलत: बच्चे भी माँ-बाप की उंगलियों को ज्यादा देर तक थाम कर नहीं चल पाते और शहरी आपाधापी में खो जाते हैं अथवा चमककर रह जाते हैं।

'एक माँ
चल रही है सड़क पर
अपने बच्चे को
कि प्रलयकाल तक
ले जायेगी उसे निकालकर
चारों तरफ से
उमड़कर आ रही आफ़तों से।'[15]

शहरी जीवन में बनावटीपन और अजनबीपन दोनों होता है। रिश्तेदारी से भी

Certified as TRUE COPY
Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

सहयात्रियों की तरह ही लोग मिलते-जुलते हैं। वह सहयात्री जो एक निश्चित स्टेशन पर उतर जायेगा। दु:ख इस बात का है कि ऐसा सोचकर वे गर्व भी महसूस करते हैं कि भई! मैं तो अपना देखता हूँ, यही जिंदगी है। फलत: जिंदगी की स्वाभाविकता और वास्तविकता से जानबूझकर आँख चुराने वाले फर्श वालों ने इसे ही धर्म भी समझा है और कर्म भी। अख़बार पढ़कर, ड्राइंग रूम में ही अफसोस जताकर काम पर निकल जाने की नियति ने उन्हें मानवता के संदर्भ से बाहर धकेल दिया है। अजी छोड़िये, आज तो लोग गंभीर होकर बात भी नहीं करते, काम क्या करेंगे भला!

अख़बार को इतना गंभीर होकर पढ़ते हैं जैसे अख़बार की घटनायें उनके साथ घटी हों। फिर अख़बार का पेज पलटते ही पुन: गम्भीर हो जाते हैं और अख़बार मोड़कर दराज में रखते-रखते आक्रोश गलकर ठंडा लोहा हो जाता है। फिर किसी ने यह भी तो कहा है। 'जो बीत गयी, सो बात गयी।'

और पढ़ रहा है वह
अख़बार
ऐसे निश्चिंत भाव से,
जैसे कभी नहीं छुएँगी उसे,
अख़बार में छपी घटनायें।[6]

इमरजेंसी!! जब बोलना मना था, शशहहह्! आपातकाल में मिश्र जी ने देश के नागरिकों को कैदी के रुप में पाया। सब स्तब्ध थे। कवि तो समाज के निरीक्षक होते हैं लेकिन उस समय क्या सारे कवियों के कलम की नोंक टूट गयी थी वे सब कठपुतली बनकर रह गये थे। वे कवि, जो लोकतंत्र को लोक और तंत्र दो अलग-अलग बताकर लोगों को जागरूक कर रहे थे, समाज की विसंगतियों पर अपनी कलम को धार दे रहे थे, वे सब प्रचार तंत्र के भोंपू सिद्ध हुए। वे खुद सिकुड़ गये। मिश्र जी ने स्वयं जेल जाना उचित समझा लेकिन अराजकता के सामने झुकना नहीं। मिश्र जी ने हवाला दिया -

कैसे बदल गये और तो और हमारे कवि
किसी के इशारे पर शोर-सा करते हैं एक इस क्षण
और बदल देते हैं शोर का छोर किसी के इशारे पर
एक क्षण के बाद ही।[7]

देश में जब गरीब अपनी कुटिया (झोपड़ी) को घर कहता है तो बात जँचती नहीं। वह खुद भी जानता है - यह झोपड़ी है, घर नहीं। झोपड़ी की मर्यादा को बचाये रखने वाले टाट भी सड़ गये हैं। झोपड़ी में रहने वाले के साथ-साथ उसकी आशायें भी चिपक गयी हैं। उन दीवारों में जिसमें वह खुश रहने की बस कोशिश करता है यह

Certified as
TRUE COPY
Principal

अलग बात है कि झोपड़ी में पैर फैलाने भर की भी जगह नहीं है। वह पैर मोड़कर सोता है।

मिश्र जी ने इन झोपड़ियों में झाँककर देखा है, परखा है इसलिये समझा है कि झोपड़ी को वे सब घर क्यूँ कहते हैं? आक्रोश दर्ज़ करते हुए कहते हैं –

गाँव इसमें झोपड़ी है, घर नहीं है,
झोपड़ी की फटकियाँ हैं, दर नहीं है।
धूल उठती है धुएँ से दम घुटा है,
मानवों के हाथ से मानव लुटा है।
सो रहा है शिशु, माँ चक्की लिए है,
पेट पापी के लिए, पक्की किए हैं।[8]

उसी झोपड़ी में भूख से रोकर अभी-अभी बच्चे सो गये लेकिन पापी पेट भरना ही पड़ता है। माँ ने उनके लिए कुछ इंतजाम शुरु किये हैं। यह सब इसलिए हो रहा है क्योंकि झोपड़ी में रहने से पहले वह जो था, उसे वह नहीं रहने दिया गया। वह झोपड़ी में आया नहीं है, उसे लाया गया है। इंसान ने अपने चंद फायदे के लिए उसके वर्तमान और भविष्य को लिए पुन: निर्मित करने पर विवश कर दिया है और खुद को उनका उद्धारक भी बतलाया है।

मिश्रजी ने शहर पर हावी पाश्चात्य सभ्यताओं का जो जिक्र अपनी कविताओं में किया है, वह चिंताजनक है। शहर बड़े धूम-धाम से नये साल पर लोगों को बधाइयाँ देता है शायद इसीलिए शहर ही बदलता है, गाँव नहीं। गाँव में पेट-पीठ एक करके दिन-भर कमाई के लिए की गयी मेहनत से चूर होकर वह झोपड़े में सोता है (जिसे वह अपना घर भी कहता है) तो उसे पता नहीं चलता कि यह साल कब बीता और नया कब आया गाँव के लोग मुँह ताकने लगते हैं कि 'नया साल मुबारक हो' कहने वालों की यह आवाज़ किस ओर से आ रही है –

बहुत बड़े हैं हम, बहुत बड़ा है हमारा देश।
हर नये साल का परिवेश।
इसीलिये तो हमारा कुछ भी नहीं बदल पाता
हमारा हर शहर
गाता है अंग्रेजी में नये साल की बधाई
और हमारा गाँव ताकता है उठाकर मुँह चारों ओर
कि यह अटपटी आवाज़ किस तरफ से आयी?[9]

शहर के लोगों को खबर ही नहीं कि गाँव में लोगों का जीवन कैसा है। वे कैसे दु:ख सहते हैं, कैसे जीते हैं, क्या करते है, एक खुशी के लिए क्या-क्या करते हैं – इन

Certified as TRUE COPY
Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.

तमाम बोरिंग (शहर के लोगों के लिए) बातों के लिए उनके पास समय कहाँ हैं। ऑफिस से कबूतरखाने आने व जाने की लत ने उन्हें कम्प्यूटर का माउस बना दिया है। उनकी दृष्टि में केवल एक ही इंसान है - वे खुद। 'मानव-मानव के लिए' जैसी मानसिकता को वे फिलोसफी कहते हैं जिसमें कोई इंट्रेस्ट नहीं। मिश्रजी ने प्राकृतिक उपमानों की सहायता से उनकी चुटकी ली है।

भई सूरज।
जरा इस आदमी को जगाओ
भई, पवन!
जरा इस आदमी को हिलाओ
यह आदमी जो सोया पड़ा है
जो सच से बेखबर है
सपनों में सोया पड़ा है।
भई, पंछी!
इनके कानों पर चिल्लाओ।[10]

मगर अफ़सोस उन पर कोई असर नहीं होता। यूँ तो प्रगतिवाद के लिए निराला समेत कई धुरंधरों को स्मरण किया जाता है लेकिन मिश्र जी ने ऐसे प्रगतिवाद को नहीं माना जिसमें लोकहित न हो। समाज में अनिश्चितता का वातावरण बना हुआ है। वैसे भी कैलेंडर बदलने से सदियाँ तो बदलती नहीं। समाज सतत् पविर्तित होता रहता है। एक वर्ग दूसरे को दबाता रहेगा और खुद भी अपने फायदे के लिए दबता भी रहेगा। पूँजीवाद खत्म नहीं हुआ, समाजवाद आ पहुँचा। पहले पूँजीवाद का खात्मा करना होगा जिससे पददलित वर्ग को जीने का अवसर मिले। कवि को भला किसी विचारधारा में बँधने की क्या आवश्यकता है! बड़े-बड़े आचार्यों ने कविता को स्वतंत्र भावना से प्रेरित बताया तो कवि जन प्रगतिवाद, प्रयोगवाद या किसी अन्य वाद-विवादों में क्यूँ पड़े। उन्हें अपनी स्वातंत्र्य पर स्वाभिमान होना चाहिए। कवि के ऊपर जनहित की जिम्मेदारी है। अपनी कविता शीर्षक 'पत्र साम्यवादी' में मिश्रजी ने स्पष्ट किया कि 'जनधारा को कोई परंपरा या वाद अब नहीं रोक पाएगा।'

लोगों को 'सेठजी एक झंझट है' से कब आजादी मिलेगी। रोटी कपड़ा और मकान की वकालत करते हुए मिश्रजी ने अपनी कविता को राजनीति के ऊपर सिद्ध किया है। 'एक लेख मेरा भी छप जाये' की मानसिकता के ऊपर उठकर कवियों, लेखकों को जनधारा से जुड़ना होगा। एक किसान जो अकाल से फटी ज़मीन में अपना भाग्य ढूँढ रहा है, कवियों की कविताओं में खुद को देख सकें। लेकिन कविताओं में यथार्थ के बजाय वायवीयता है, प्रदर्शन है, भाव के बजाय बुद्धि है और

Certified as TRUE COPY
Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala Colle

व्याकुलता है – खुद को कवि कहलवाने की।

झूठे लेख उसके फैशन भर कविता हैं
पढ़ते हैं, सुनते हैं लोग चाव से उछाह से भी
रोना किसान के मज़दूर के दुःखडे को
शीशे में हजार बार देखना मुखड़े को
उतरेगी कैसे उन शब्दों की व्याकुलता
जिनका दुःख गाना है, उनको जानो तो
इसके सिवाय यह पढ़ना और लिखना
केवल एक मोर्चा है।[11]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मिश्र जी सच्चे अर्थों में लोकवादी हैं। उन्होंने लोक और लोगों की समस्या को बारीकी से जाना-समझा है इसलिए पढ़ाई-लिखाई को भी एक मोर्चा ही माना। मिश्र जी की कविताओं में लोकमानस चलकर नहीं आता। मिश्र जी स्वयं उनके पास जाते हैं। इस सव्यसाची अभ्यास का श्रेय मिश्रजी को ही जाता है। गाँव को शहर से किसी भी पायदान पर वे कम नहीं आँकते। उन्होंने कवियों को भी बाल सँवारने से हटाकर काम पर आने की नसीहत दे डाली। मिश्र जी का लोकसाहित्य लोगों की जुबान पर है और मिश्रजी की भावनात्मकता उनके हृदय में। सच है –

'कहना है तो एक शेर ऐसा भी कहो।
जीया हुआ भी हो कि जो भोगा हुआ भी हो।'

संदर्भ संकेत

1. जाहिल मेरे बाने में संकलित, पृ. 26
2. भवानी प्रसाद मिश्र, अनुभव-वैविध्य के अप्रतिम सर्जक, पृ. 111-112
3. भवानी प्रसाद मिश्र, प्रतिनिधि कविताएँ, पृ. 27
4. सन्नाटा, पृ. 28
5. एक माँ, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ. 61
6. वही, पृ. 61
7. भवानी प्रसाद मिश्र, अनुभव-वैविध्य के अप्रतिम सर्जक, पृ. 112
8. वही, पृ. 114
9. वही, पृ. 114
10. वही, पृ. 114
11. भवानी प्रसाद मिश्र का काव्य संसार, पृ. 24

Certified as
TRUE COPY

Principal
Ramniranjan Jhunjhunwala College,
Ghatkopar (W), Mumbai-400086.